शोध मंथन, Impact Factor 6.726 (SJIF), UGC No. 40908 ISSN: (P): 0976-5255 (e): 2454-339X
Vol. X, No.II, pp (709-716) April - June 2019

सिद्धनाथ कुमार के निबंधों में राजनीतिक हास्य–व्यंग्य

शुभ्रा
शोधार्थी
राँची विश्वविद्यालय, राँची (झारखण्ड)
Email : shubhrasingh909@gmail.com

सारांश

डॉ० सिद्धनाथ कुमार एक सम्पन्न व्यंग्यकार थे। उन्होंने स्वंत्रतापूर्वक एवं स्वतंत्रता पश्चात्य जीवन और समाज में परिवर्त्तन के साथ–साथ राजनीतिक जीवन में भी भ्रष्टाचार के चिन्ह एकदम साफ और स्पष्ट देखा है। स्वतंत्रता प्राप्ति से पूर्व जिन स्तरों पर हम जिन मूल्यों से जुड़े हुए थे, हमारे जो आदर्श और मान्यताएँ थी, स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात्य वह पूरी तरह समाप्त हो गयी। व्यक्तिगत स्वार्थों की सिद्धि प्रत्येक व्यक्ति के जीवन का मूल मकसद बन गया था। कर्त्तव्य और नैतिकता की भावना एक प्रकार, से समाप्त हो गयी थी विकृतियाँ और विसंगतियों का ऐसा भयावह दौर चला कि सारे आदर्श ढह गये। डॉ० सिद्धनाथ कुमार साहित्य को जीवन के आगे चलने वाली मशाल मानते हैं, ऐसे समय में उनकी व्यंग्य की लौह–लेखनी ने समाज तथा राजनीतिक निर्माण के लिए आग उगलने का कार्य करने लगी। वस्तुतः सिद्धनाथ कुमार ऐसे व्यंग्यकार थे, जिन्होंने राजनीतिक विसंगतियों को अपने निबंधो का विषय बनाया है।

प्रस्तावना

डॉ० सिद्धनाथ कुमार के व्यंग्य निबंधों का विस्तार अर्न्तरात्मा से लेकर बाहरी जगत् तक है। राजनीतिक हो या अन्य कोई क्षेत्र सभी क्षेत्रों में मची आपाधापी, धकापेल, स्वार्थपरता और आचरण भ्रष्टता डॉ० कुमार की चाक– चौबंद चौकसी रखने वाली आँख के सामने रहती है। वे बैलोस ढंग से और निःसंदेह निडर भाव से उनकी जड़ों पर प्रहार करते थे।

आजकल चुनाव की परिस्थिति में भी कालाबजारी होने लगी है। इस संदर्भ में अमृतराज जी ने चुनाव की स्थिति का बड़े बढ़िया ढंग से पर्दाफाश किया है –

''रकम काटने वाले रकम काट रहे हैं, पर्चियाँ काटने वाले पर्चियाँ काटने वाले पर्चियाँ काट रहे है, नोटों की ताल पर वोट नाच रहे हैं।

..... अहा सखि, आँखे जुड़ा गयी, कैसी नटनागर बेला है, मोटरों की, फेरी की, बोटरों की हेराफेरी की।''[1]

जब देश का सारा माहौल उजड़े लोगों से भरा–पड़ा हो तो ऐसे में उघड़ेपन की पहचान खो जाती है। उस पहचान को जगाने के लिए संवेदनशील किन्तु साहसी लेखक को सामने आना पड़ता है। डॉ० सिद्धनाथ कुमार ने इसी साहस का परिचय दिया है। देश के नेता किन लोगों

को बनाना चाहिए, उसके आवश्यक गुण क्या–क्या होनी चाहिए? इन सभी बातों को डॉ० कुमार ने व्यंग्य के नजरिये से 'राजनीतिक में आइये' में देखने का प्रयास किया है। व्यंग्यकार पात्र के मुँह से कहलवाने हैं–

''दोस्तों आप लोग बेकार ही बहस में पड़े हैं। नेताजी की बात तो ठीक से समझिए। वे पहले से देखते आए हैं और जानते हैं कि राजनीतिक में कैसे भले लोगों की जरूरत है। एक ही भला आदमी सब जगहों पर फिट नहीं बैठता। राजनीतिक का भला आदमी दूसरा ही होता है। सच्चाई, ईमानदारी, देश सेवा जैसी बेकार की बातों पर जोर देने वाले कुछ गलत लोग राजनीति में न आ जायें, इसीलिए कहा जा रहा है कि भले लोग ही राजनीति में आये।''[2]

डॉ० सिद्धनाथ कुमार के व्यंग्य–लेखन में राष्ट्र–चिन्ता के जलते हुए प्रश्नों का विस्तार है।

राजनीति के चुनाव के पक्ष में 'रवीन्द्रनाथ त्यागी' एवं 'बरसानेलाल चतुर्वेदी जी' ने चुनाव की अनैतिक प्रणाली पर समान रूप से व्यंग्य प्रहार किया है। चतुर्वेदी जी मर्माघात करते हुए लिखते हैं कि –

''बोटरों को शराब पिलाने के लिए धन चाहिए। कुछ वोटर खरीदने के लिए धन चाहिए, जीपें, पेट्रोल, प्रकाशन सामग्री और कार्यकर्त्ताओं के खर्च तात्पर्य यह है कि जो जितना रूपया अधिक खर्च कर सकता है। वह चुनाव जीत सकता है। गधा चुनाव जीत जाता है, सिंह की जमानत जप्त हो जाती है।''[3]

आज के राजनीतिक लोगों की अवसर वादिता, स्वार्थीपन, घिनौनी हरकतों पर सिद्धनाथ ने अपने व्यंग्य निबंधो द्वारा प्रकाश डाला है। एक तरफ तो सचमुच डॉ० कुमार राजनीतिज्ञ के बड़प्पन का बखान करते हुए प्रतीत होते हैं, पर गौर से देखने पर उसकी बखिया उधेड़ते हुए उसकी सच्चाईयों का पर्दाफाश करते हुए दिखाई देते हैं। इसलिए यहाँ हास्य गुदगुदाता है और व्यंग्य सोचने के लिए बाध्य करता है।

हमारे देश में काम से अधिक उद्घाटन समारोह को महत्व दिया जा रहा है। इस महान देश को वे प्रणाम करते हैं, तथा अपने शासकों की भाषा को वे राष्ट्रभाषा मानते हैं। व्यंग्यकार सिद्धनाथ कुमार की चिन्ता है कि यह सब कुछ कुर्सी के लिए है। यहाँ के नेता अपमान की परवाह नहीं करते। यहाँ आजादी का मतलब कुछ भी करने की आजादी है। और यहाँ की राजनीतिक में सत्ता प्राप्त करने के लिए कुछ भी किया जा सकता है। प्रजातंत्र के बारे में लिंकन की प्रसिद्ध उक्ति का नवीकरण डॉ० सिद्धनाथ कुमार ने बदलते हुए संदर्भ में किया है –

''यहाँ पैसों का शासन है, पैसों के लिए होता है, पैसो के द्वारा होता है।''[4]

नेताओं का दल बदलना राजनीति में आम बात है। यह दलबदल नीति व्यंग्यकारों के आकर्षण का केन्द्र रही है। प्रसिद्ध व्यंग्यकार हरिशंकर परसाई इस प्रसंग में लिखते हैं कि– ''मैंने समझ लिया कि मेरे जीवन का उद्देश्य सत्यमंत्री बनना है। इस सत्य के लिए मैंने ईमान धर्म सबका परित्याग किया। सत्य के लिए बड़ा त्याग करना पड़ता है। सत्य मुझसे कभी नहीं छूटा। किसी

भी पार्टी का मंत्रीमंडल हो, मैं जरूर मंत्री रहा। जिसका मंत्रीमंडल बना मैं उसी का हो गया। आप मेरे आदर्श पर चले।''[5]

शरदजोशी जी भी नेताओं के दल–बदल पर नपे–तुले शब्दों में व्यंग्य किया है –

''नेताओं में भाई, भतीजावाद के अनुसार शासन को मदद करने की प्रवृत्ति है, जैसे–यदि वे मंत्री महोदय इस्तीफे के दबाव पर हमारे, आदमी के नाम पर टेण्डर मंजूर कर देते हैं तो हम उनके साथ हैं और उसका समाजवाद का कार्यक्रम हमें स्वीकार है। नहीं, भाड़ में जाये, यह डिक्टेरशिप हम सहन नहीं करेंगे और संगठन के प्रति निष्ठा के नाम खिसककर दूसरे गुट में चले जायेंगे।''[6]

राजनीति में भ्रष्टाचार कोई नया विषय नहीं है, अपनी स्वार्थपूर्ति के लिए हर दूसरे दिन नेता अपना दल बदल लेते हैं। 'श्याम बैजलजी' ने 'पौआ' में नेता के दलबदल पर आघात करते हुए लिखा है– ''आप हर प्रकार की टोपियों का थैला अपने पास रखिए। अपनी डायरी में अपटूडेट सूचना रखिए। हर एम.एम.ए. की सूची में प्रतिदिन की दशा नोट करिये। यदि किसी जनसंधी ने अपने को बदल लिया है तो उस स्थान पर जिस रंग की टोपी वाला हो गया है वैसा निशान उसी रंग का लगा दीजिए।''[7]

नेताओं के कुर्सी–मोह को सभी जानते हैं। आम तौर पर सभी व्यंग्यकारों ने इस पर अपने वाण छोड़े हैं। 'चमचे वही रहे' मैं इसी तरह का सुन्दर व्यंग्य सिद्धनाथ कुमार ने किया है –

''यह कैसे हो सकता है? तुम्हारे कल्याण के लिए मैं एक नहीं दस बार पार्टी बदल सकता हूँ, बेड़े से बड़ा त्याग कर सकता हूँ।''[8]

नेता को चुनाव के पूर्व जो जनता की सेवा में रूचि होती है, वह चुनाव के बाद कपूर की भांति गायब हो जाती है। डॉ० सिद्धनाथ कुमार की व्यंग्य–कथाओं की व्यंग्य–सीमा में राजनीतिक का विस्तृत परिदृश्य हुआ है। इन्होंने राजनीति में आई मूल्यों की गिरावट तथा विघटन को केन्द्र में रखकर समकालीन साहित्यक परिदृश्य में व्यंग्य का लगातार सृजन किया था। इनकी व्यंग्य रचनाएँ हमारे मन में गुदगुदी ही पैदा नहीं करती बल्कि हमें उन राजनीतिक वास्तविकताओं के सामने खड़ा करती है। जिनसे किसी व्यक्ति का अलग रह पाना असंभव है। लगातार खोखली होती जा रही हमारी राजनैतिक व्यवस्था में पिसने मध्यवर्गीय मन की सच्चाईयों को इन्होंने बहुत ही निकटतम से पकड़ा है। राजनीतिक भ्रष्टाचार की खिल्ली उड़ाते हुए इन्होंने सदैव विवेक एवं सम्मत दृष्टि को साकारात्मक रूप से प्रस्तुत किया था।

जब व्यंग्य को राजनीतिक उपलब्धि का अस्त्र बनाया जाता है तब वह व्यंग्य होकर भी राष्ट्र के लिए बिडम्बना होता है। व्यंग्य का मूल्य भी इसी में है कि वह हमारी कमजोरियों और समसामायिक अपेक्षाओं से हमें अवगत कराए। पतित मनोवृत्तियों का विरोध करें और भ्रष्टाचार विरूद्ध रचनात्मक विचार दें।

'व्यंग्य' का विधा के रूप में प्रयोग आजादी के बाद स्पष्ट रूप से हुआ है। रामराज की परिकल्पना के आदर्श को लेकर स्वतंत्रता प्राप्ति का जनान्दोलन आजादी के बाद के व्यवस्था में

मनोवांछित परिवर्त्तन न पाकर मोहभंग का रूप धारण करता है और व्यंग्य शैली को विधा का रूप धारण करने के लिए उर्वर जमीन प्रदान करता है।

राजनीति का प्रभाव समाज के हर अंग पर पड़ता है। स्वातंत्र्योत्तर काल से ही राजनीति कलुषित होती रही है। आज ये विसंगतियाँ अपनी पराकाष्ठा पर पहुँच चुकी है। अगर कोई बेकार रह जाता है या उसे किसी तरह से अपना रोजगार जुटाने में कठिनाई लगती है और अगर वह भाषण देने की कला सीख जाए तो बिना किसी प्रयास के वह नेता बन जाता है और तब वह परिवार के पालन–पोषण की समस्याओं से मुक्त हो जाता है। उसके खोखले आश्वासन जनता को प्रभावित करने लग जाते हैं। जनता को अपने वादों में फंसाकर आगे बढ़ने की कला व सीख जाता है। धीरे–धीरे वह एक–एक सीढ़ी चढ़ने लगता है, यह हो गया है आज का राजनीति स्वरूप।

वास्तव में जब तक समाज देश और राजनीतिक में भ्रष्टाचार, विसंगतियाँ, मूल्यहीनता एवं विद्रूपताएँ विद्यमान रहेगी, इन पर चोट एवं इनका विरोध व्यंग्य द्वारा होता रहेगा। डॉ० सिद्धनाथ कुमार ने 'कुर्सी पार्टीः रोटी पार्टी' में चुनावी उम्मीदवारों पर व्यंग्य करते हुए कहा है–

''वोट तो किसी न किसी को देना ही है। हो सकता है आपको ही दे दूँ। लेकिन मैं कुछ निर्णय कर सकूँ, इसलिए मुझे चुनाव संबंधी कुछ जानकारियाँ दीजिए–

कहिए क्या जानना चाहते हैं आप?– पूछा उन्होंने। मैंने जिज्ञासा की– 'इस देश में कितने लोग चुनाव लड़ रहे हैं?'

उत्तर मिला – सिर्फ पच्चीस उम्मीदवार मैदान में हैं। मेरा मन बहुत दुःखी हुआ, मैंने पूछा– हमारे क्षेत्र में इतने ही योग्य व्यक्ति हैं? सुनते हैं दूसरे क्षेत्रों में पचास–पचास उम्मीदवार हैं, कहीं–कहीं उनकी संख्या नब्बे से भी ऊपर हैं। हमारे क्षेत्र का यह कैसा दुर्भाग्य हैं, कि जहाँ सिर्फ पच्चीस ऐसे व्यक्ति हैं, जिनके मन में सच्ची देशभक्ति है।''[9]

व्यंग्य यदि बुराई पर चोट करता है, तो क्या इससे राजनीतिक व्यवस्था में सुधार संभव है? इस तरह का सवाल प्रायः उठाया जाता है। व्यंग्यकार का काम तटस्थ रेफरी जैसा होता है, जो गलती पर सीटी बजाता है। यह अलग बात है कि सीटी खेल बंद नहीं कर पाती, या पेनल्टी के लिए नहीं कहती, फिर भी यह सीटी इस दृष्टि से महत्वपूर्ण है कि वह राजनेता के मानस को अच्छे–बूरे के प्रति आगाह करती रहती है।

आज राजनीति का स्वरूप बहुत व्यापक हो गया है। बल्कि हमारा जीवन उससे बहुत अधिक प्रभावित है। राजनीतिक हमारे जीवन का अभिन्न अंग बन गई है। जीवन के हर क्षेत्र में वह व्याप्त है। कोई क्षेत्र उससे अछूता नहीं है। शासन, सामाजिक–संख्या, से व्यक्ति–व्यक्ति के संबंधों तक आज राजनीति फैली हुई है। जब तक संस्थाएँ होगी तब तक राजनीति मौजूद रहेगी।

आज राजतंत्र या राजसत्ता खत्म हो चुकी है। उसकी जगह प्रजातंत्र या जनतंत्र ने लेली है। इसे हमने अपनी सुविधा के लिए अपनाया है, क्योंकि एक समय ऐसा आया, जब राजतंत्र हमें बंधनों में जकड़ता हुआ प्रतीत हुआ। तब हमने उसे त्याग दिया। लोगों के, लोगों द्वारा और

लोगों, के लिये चलाये जाने वाले प्रजातंत्र को हमने स्वीकार किया। लेकिन यहाँ भी एक शासन है। उसके अपने निर्णय है। उसमें भी कुछ सही कुछ गलत है। डॉ० सिद्धनाथ कुमार ने प्रजातंत्र के इस पतनोन्मुख अवस्था का बड़ी गहनता के साथ अध्ययन किया है। इनकी व्यंग्य लेखन प्रतिभा इसका परिचायक है – व्यंग्यकार ने 'राजनीति के आइने' व्यंग्य में अपने ही पात्र से कहलवाया है –

''सच्चाई, ईमानदारी, देश सेवा जैसी बेकार की बातों, पर जोर देने वाले कुछ गलत लोग राजनीति में न आ जाये, इसीलिए कहा जा रहा है कि भले लोग ही राजनीति में आए।''[10]

आजकल व्यंग्य–साहित्य जितना रूचिकर और मानव–मनोविज्ञान के अनुकूल प्रतीत होता जा रहा है, उससे यह स्पष्ट हो जाता है कि यह विद्या आज सबसे अधिक महत्व की वस्तु बन गई है। संगतिपूर्व जीवन में जिस प्रकार श्रृंगार का स्थान है, ठीक उसी प्रकार असंगतिपूर्ण जीवन में आधुनिक व्यंग्य का।

आज हमारा देश स्वतंत्र हो चुका है, किन्तु सरकार और राजनीति में अनेक प्रकार के भ्रष्टाचार एवं विकृतियाँ आ गई है। जहाँ लोगों में अधिकारों के लिए नीव चेतना आई है, वहीं वे अपनी दायित्व–बोध से लुप्तप्राय होते जा रहे हैं। नेतागन एवं गैर–सत्ताधारी नेता सम्पत्ति की लालसा में इस प्रकार फंसे हुए हैं कि जनता के प्रति अपने कर्त्तव्यों को भूल रहे हैं। राजनीति में आए बदलाव के कारण भ्रष्टाचार, दल–बदल, कुर्सी–दौड़ आदि दिन–ब–दिन बढ़ते जा रहें हैं। एक व्यंग्यकार के रूप में सिद्धनाथ कुमार अपने व्यंग्यों द्वारा राजनीति दुर्बलताओं को दूर करना ही अपना प्रयोजन मानते हैं। उनकी रचना साहित्य चुटीले व्यंग्यों से भरा पड़ा है।

'प्रजातंत्रः यक्ष–प्रश्न' संवाद के माध्यम से उन्होंने आज की राजनीतिक स्थितियों का पर्दाफाष किया है, उनके व्यंग्य के तेजधार संवाद –

''यक्ष–इस देश में सर्वत्र व्याप्त वस्तु क्या है?

युधिष्ठिर – भ्रष्टाचार

यक्ष–मनुष्य की कुशलता की सही परीक्षा कहाँ होती है?

युधिष्ठिर – भ्रष्टाचार और असत्य को छिपाने में।[11]

व्यंग्यकार ने वर्त्तमान में दिशाहीन नेता के स्वार्थपूर्ण कार्यों पर व्रीव व्यंग्य किया है। इनके व्यंग्य अत्यन्त गंभीर विषय पर गंभीर रूप में प्रकाश डालकर उसे प्रभावशाली बना देता है। इनके व्यंग्य मात्र मनोरंजन ही नहीं करते हैं अपितु वे पाठक को उत्तेजित करके उसकी राजनीतिक चेतना को जगाते है। डॉ० कुमार के व्यंग्य सुलाते नहीं, बल्कि स्वप्न की दुनियाँ से बाहर लाकर यथार्थ की कठोर धरातल पर लाकर खड़ा कर देते हैं। वास्तव में आज की राजनीति एवं राजनेताओं ने जो विष देश में घोल रखा है, उससे देश की जनता का दम घुट रहा है। डॉ० सिद्धनाथ कुमार ने उन नेताओं का चित्रण अपने व्यंग्यात्मक दृष्टि से किया है। यही कारण है कि उनके व्यंग्य में राजनीति स्थिति के जीवन चित्रण मिलते हैं।

सरकार की ढुलमूल नीति और देश में हो रहे विकास कार्यों की ओर संकेत करते हुए उन्होंने अनेकों व्यंग्य किए हैं। नेतागण सिद्धान्त रूप में देश और देश की जनता का हित

साधना ही अपना मुख्य कार्य और प्रथम धन मानते हैं, किन्तु नेता वर्ग के कार्य और विचार उनके सिद्धान्तों के विपरित है। इस प्रकर से अपनी सही दिशा और देश के प्रति अपनी सेवा भावना को वे भूल चुके हैं।

देश की यह विशेषता है कि चुनाव के वक्त हर नागरिक को बराबर समझना चाहिए, लेकिन कानून बनाने समय, और सुविधाओं की व्यवस्था के समय सबको अलग–अलग स्थान देना चाहिए। आज धर्म वाले, जाति वाले, भाषा वाले, सभी लोगों की संख्या बहुत बड़ी है। किन्तु इनको समान महत्त्व देने वाले अल्पसंख्यक हैं। डॉ० सिद्धनाथ कुमार ने इसे व्यंग्य के द्वारा स्पष्ट किया है–

''इसलिए तो मैं अल्पसंख्यक हूँ कि मेरे साथ कोई नहीं है। सब धर्म वाले अलग–अलग हैं, सब जाति वाले अलग–अलग हैं, और उन सभी लोगों की संख्या बहुत बड़ी है। मैं धर्म, जाति, भाशा और संस्कृति सबको समान महत्व देता हूँ, इसलिए मैं अल्पसंख्यक हूँ, और इस अकेले गरीब प्राणी के जीने–मरने की कोई चिन्ता नहीं करता।''[12]

व्यंग्यकार के वाणी में दर्द के साथ व्यंग्य है। वर्त्तमान राजनीति इतनी दूषित हो गई है कि इसके बूरे परिणाम सामने आ रहे हैं। इस संदर्भ में 'कान्ति कुमार जैन' कहते हैं –

''जीवन के सारे कार्यों का प्रस्थान और गन्तव्य धर्म और धार्मिक कर्मकाण्ड था। आज जीवन की सारी महत्त्वपूर्ण बातों का प्रारंभ और अंत राजनीति है।''[13]

राजनीति एक सम्पूर्ण व्यवस्था कहलाती है जिसका मूल उद्देश्य लोकहित होता है, और जिसकी सफलता जनता की खुशहाली पर निर्भर करती है। राजनीति में जनता एक सेवक का चुनाव करती है ऐसा सेवक जिसे नेता कहा जाता है, जो जनता की हर समस्या से परिचित हो, उसके और जनता के मध्य कोई राज न हो। पारदर्शिता इस व्यवस्था का एक मूल अंग होता है। जब शासक अपने सहयोगियों के हर कार्य और राज से परिचित होता है तो वो सफल रहता है। लेकिन यह बातें सिर्फ पारिभाशित करने मात्र ही है, जिसका आज हकीकत से कोई वास्ता नहीं है। आज किसी भी नेता के लिए राजनीति का मतलब चुनाव जीत कर सत्ता की कुर्सी पर बैठना है, और फिर पाँच सालों तक जितना हो सके जनता के पैसे से अपना हित करना है।

आज के नेता सेवक नहीं शक्ति में मदहोश अकुशल राजा बन गए हैं, जो अपना कर्त्तव्य भूल चुके हैं। राजनीति आज नेताओं का स्वार्थ सिद्ध करने का साधन मात्र ही रह गया है –

''राजनीतिक जगत में स्वार्थ के इस देवता का प्रादुभाव अभी कुछ ही दिनों से हुआ है, और आज यह राजनीति का प्रमुख आधार बन गई है। वर्त्तमान समय में वही व्यक्ति राजनीति में सफलता प्राप्त कर सकता है, जो स्वार्थ देवता की शरण में जाकर उसकी भक्ति का भाजन बन जाता है।''[14]

डॉ० सिद्धनाथ कुमार की ही तरह ''डॉ० हुकुम चन्द राजपाल'' भी मानते हैं कि जब राजनीति में जुड़े उच्च पद के लिए व्यक्ति भ्रष्टाचार फैला रहा है, तो नीचे स्तर के लोग क्यों बचे रहे? उनके अनुसार –

''असल में पूरा देश ही गोलमाल है। रातों–रात जिस देश में नेता सोना निगल जाए, पेट्रोल खा जाए, गेहूँ चबा जाए, चीनी पीस कर सारी की सारी चाट जाए, ऐसे देश में भला क्या नहीं हो सकता, फिर नौकरी, पेशा वाला यदि थोड़ा हेरफेर कर भी लेता है तो कवि को कोई ऐतराज नहीं होना चाहिए।''[15]

अब तो आलम यह हो गया है कि जहाँ भी राजनीति का जिक्र होता है, वहाँ अपने–आप भ्रष्टाचार भी मुँह खोल देता है। और यह स्पष्ट कर देता है कि राजनीति और भ्रष्टाचार का तो चोली–दामन का साथ है, जिसे अलग नहीं किया जा सकता है। दुःख की बात यह है कि आज समाज की बागडोर कहीं–न–कहीं राजनेताओं के हाथ में है, उन्हीं नेताओं के द्वारा संचालित तथा नियंत्रित की जा रही है। इस पर 'कान्ति कुमार जैन' का कहना है –

''आज के युग में समाज की शक्तियों कों नियंत्रित करने वाली बागडोर राजनीति के पास है। अब समाज को गंदा करने वाला परनाल विधायक, विश्राम–गृहों, संसद–सभाओं और मंत्रियों की कोठियों से फूटता है।''[16]

निःसंदेह नेताओं की लड़ाई का एक मात्र आधार कुर्सी होता है। इसलिए उनमें आपस में ईर्ष्यापूर्वक स्पर्धा चलती रहती है। जिसमें नीति अनीति पर विशेष ध्यान नहीं दिया जाता। वे अपने उद्देश्य की पूर्ति के लिए सही गलत वह सभी कुछ करते हैं जो कि आवश्यकता होता है। इस संदर्भ में 'केशवचंद्र वर्मा' का व्यंग्य काफी सार्थक प्रतीत होता है–

''जब इस नये युग की देवी परमशक्ति नहीं कुर्सी है – इसी को पाने के लिए आज के देव नर, किन्नर, गंधर्व, यक्ष, राक्षस सभी में संघर्ष मचा हुआ है। जो इसे पा जाता है वह स्वयं सिद्ध नियम अनुसार नवरत्न अथवा देवता की कोटि में आ जाता है। शेष लोग उसको सिंहासन से हटा कर नीचे लाने का प्रयत्न करते हैं।''[17]

व्यंग्य का नष्तर आज के राजनीतिक जीवन के लिए परम् आवश्यक है, उसके द्वारा उत्पन्न हुई चुभन पर हास्य मरहम का काम करता है। इस प्रकार राजनीतिक के विविध रूपों पर व्यंग्यकार ने बड़ी ही सफलता के साथ व्यंग्य किया है। इस व्यंग्य प्रहार के मूल में डॉ० सिद्धनाथ कुमार का राजनीतिक व्यवस्था के सुन्दर, स्वस्थ बनाने का सपना विद्यमान है।

इस प्रकार राजनीति में कई ऐसी विसंगतियाँ है, जिसके कारण कामकाज ठीक से नहीं हो पाता है, पर वे विसंगतियाँ इस कार्यप्रणाली में इतनी घुल गयी है कि प्रशासन को उनसे मुक्त करना समुंद्र के भीतर से मोती ढूँढ़ लाने के बराबर है।

संदर्भ ग्रंथ

1.डॉ० सुधाकर उपाध्याय, *समकालीन हिन्दी निबंधों का अनुशीलन,* पृ०– **37**
2. डॉ० सिद्धनाथ कुमार, *चमचे वही रहें,* पृ० – **11**
3. डॉ० सुधाकर उपाध्याय, *समकालीन हिन्दी निबंधों का अनुशीलन,* पृ०– **37**
4. डॉ० सिद्धनाथ कुमार, चमचे वही रहें, पृ० – **96**
5. डॉ० सुधाकर उपाध्याय, समकालीन हिन्दी निबंधों का अनुशीलन, पृ०– **38**

6. वही
7. वही
8. डॉ० सिद्धनाथ कुमार, चमचे वही रहें, पृ० – **97**
9. वही, पृ० – **77–78**
10. वही, पृ० – **11**
11. डॉ० सिद्धनाथ कुमार, मिले सुर मेरा–तुम्हारा, पृ० – **22**
12. डॉ० सिद्धनाथ कुमार, मियाँ बीबी राजी....., पृ० – **15**
13. डॉ० बालेन्दु शेखर तिवारी का व्यंग्य साहित्यः *संवेदना और शिल्प*, पृ०–**123**
14. पंडित हरिशंर शर्मा, *गड़बड़ गोष्ठी*, पृ० – **37**
15. डॉ० परमेश्वर गोयल, *भागीरथी*, संपादक, पृ०–**25**
16. हरि शंकर परसाई, काग–भगोडा, पृ०– **8, 9**
17. डॉ० सुधाक़.र उपाध्याय, समकालीन हिन्दी व्यंग्य निबंधो का अनुशीलन, पृ०–**37**